भाषा । साहित्य । संस्कृति

प्रश्नचिह्न

जो इस पागलपन में
शामिल नहीं होंगे
मारे जाएँगे
कटघरे में खड़े कर दिए जाएँगे,
जो विरोध में बोलेंगे
जो सच-सच बोलेंगे,
मारे जाएँगे।

~ राजेश जोशी

वर्ष : 03 । अंक : 28 । जुलाई 2026

9 789360 688264

आवरण : वंशीलाल परमार

संपादक : आलोक रंजन

भाषा । साहित्य । संस्कृति

प्रश्नचिह्न

जुलाई 2026 । अट्ठाईसवाँ अंक

प्रबंध सम्पादक:
राहुल राज

प्रबंध सहयोग:
सौरव कुमार भारती

आवरण: वंशीलाल परमार
रेखांकन: श्वेता कुमारी

सम्पादक
आलोक रंजन

अक्षर संयोजन
खुशी

प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं का सर्वाधिकार रचनाकारों के अधीन सुरक्षित है। प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार, तथ्य लेखकों के अपने हैं। प्रश्नचिह्न में प्रकाशित रचनाओं के लिए प्रश्नचिह्न पत्रिका समूह का सहमत होना आवश्यक नहीं है और न ही पत्रिका इसके लिए उत्तरदायी है।

वार्षिक मूल्य :

व्यक्तियों के लिए-	600.00 रुपये
संस्थाओं और पुस्तकालयों के लिए-	1500.00 रुपये
विदेशों में-	$25

एक प्रति का मूल्य :

व्यक्तियों के लिए-	50.00 रुपये
संस्थाओं के लिए-	100.00 रुपये
विदेशों में-	$10

विज्ञापन दरें :

बाहरी कवर-	20,000.00 रुपये
अन्दर कवर-	15,000.00 रुपये
अन्दर पूरा पृष्ठ-	10,000.00 रुपये
अन्दर का आधा पृष्ठ-	7,000.00 रुपये

संपादकीय कार्यालयः

8/54 - ए, प्रथम तल, डबल स्टोरी,
विजय नगर, दिल्ली - 110009
मोबाइल : 9717489554

ई-मेल: prashanchinha.patrika@gmail.com
infoprashanchinha.patrika@gmail.com

वेबसाईट: www.prashanchinha.in

फेसबुक: https://www.facebook.com/prasnacihnapatrika

इंस्टाग्राम: https://www.instagram.com/prashanchinha.in

अनुक्रम

सम्पादकीय

कविताएँ

राजेश जोशी, मोतीलाल दास

अनवर सुहैल, अनुपमा अनुश्री, विवेक चौधरी

कहानियाँ

डॉ. पीतांबरी

डॉ. घनश्याम आसूदाणी

लघुकथा

अमृता पांडे

राजश्री राठी

समीक्षा

डॉ. नीना छिब्बर

विविध

साहित्य समाचार

जंतर-मंतर : जहाँ सवालों ने सत्ता को पुकारा

दिल्ली में जंतर-मंतर केवल एक भौगोलिक स्थान नहीं है। यह भारतीय लोकतंत्र की उन जगहों में से एक है जहाँ समय-समय पर नागरिक अपने भीतर जमा असहमति, पीड़ा और उम्मीद को लेकर आते रहे हैं। संसद से कुछ दूरी पर स्थित यह जगह मानो सत्ता और समाज के बीच खिंची हुई वह रेखा है, जिसके एक ओर निर्णय लिए जाते हैं और दूसरी ओर उन निर्णयों से प्रभावित लोग अपनी आवाज़ लेकर खड़े होते हैं। जुलाई में जब विद्यार्थी अपने सवालों और मांगों को लेकर जंतर-मंतर पहुँचे, तब वहाँ कोई असाधारण दृश्य नहीं था; असाधारण यह था कि उन सामान्य से दिखते चेहरों के पीछे एक पूरी पीढ़ी की बेचैनी खड़ी थी। वे विद्यार्थी थे, जिनके लिए परीक्षा केवल एक परीक्षा नहीं, वर्षों की मेहनत थी; परिणाम केवल एक परिणाम नहीं, परिवार की उम्मीद थी; और शिक्षा केवल डिग्री नहीं, अपने जीवन को बदलने का सबसे महत्वपूर्ण रास्ता थी।

इसीलिए उस आंदोलन को केवल एक छात्र प्रदर्शन कहकर छोड़ देना उसके अर्थ को छोटा करना होगा। जंतर-मंतर पर बैठे विद्यार्थियों के पास अपनी-अपनी कहानियाँ थीं, लेकिन उनकी बेचैनी एक साझा अनुभव में बदल गई थी। किसी के हाथ में पोस्टर था, किसी के हाथ में संविधान की प्रति, किसी के पास अपनी मांगों की सूची और किसी के पास केवल आवाज़। उनके नारों में व्यवस्था से असहमति थी, लेकिन उससे अधिक अपने भविष्य को लेकर चिंता थी। वे उस व्यवस्था से संवाद करना चाहते थे जिसके सामने उन्होंने अपनी शिक्षा, अपने श्रम और अपने आने वाले वर्षों का प्रश्न रखा था। आंदोलन के बीच सोनम जी का अनशन इस पूरे दृश्य को एक अलग नैतिक आयाम देता है। किसी आंदोलन में भाषण देने वाला व्यक्ति अपनी आवाज़ का इस्तेमाल करता है, नारा लगाने वाला अपनी सामूहिक शक्ति का; लेकिन अनशन पर बैठा व्यक्ति अपने शरीर को ही प्रतिरोध का माध्यम बना देता है। सोनम जी का अनशन इसलिए केवल एक राजनीतिक कार्यक्रम नहीं था। वह एक ऐसा दृश्य था जिसमें एक व्यक्ति अपने शरीर की सीमाओं के भीतर रहकर व्यवस्था से एक बड़े प्रश्न का उत्तर माँग रहा था।